दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय उद्घोषित : 07.01.2025

<u>नि.प्र.अ. 150/2021</u>
<u>RFA 150/2021</u>

अनुराधा प्रसाद .....अपीलार्थी

बनाम

मीरा कुलकारनी .....प्रत्यर्थी

<u>इस मामले में पेश हुए अधिवक्तागण:</u>

अपीलकर्ता हेतु	:	श्री अरविंद कुमार एवं श्री दिव्यांशु नौटियाल, अधिवक्तागण।
प्रत्यर्थी हेतु	:	सुश्री रोहिणी मूसा, श्री निपुण कत्याल, श्री सुरेश कुमार और श्री निश्चय जौहरी, श्री जफर इनायत, अधिवक्तागण।

माननीय न्यायमूर्ति सुश्री तारा वितस्ता गंजू

<u>न्या. तारा वितस्ता गंजू,</u>

1. वर्तमान अपील विद्वान अपर जिला न्यायाधीश (ए.डी.जे.)-05, (दक्षिण), साकेत न्यायालय, नई दिल्ली [जिसे इसके बाद "आक्षेपित निर्णय" के रूप में संदर्भित किया गया है] द्वारा पारित दिनांक 14.10.2019 के निर्णय और डिक्री

पर आक्षेप करती है। आक्षेपित निर्णय द्वारा, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश VII नियम 11 के तहत प्रत्यर्थी द्वारा दायर आवेदन [इसके बाद "सि.प्र.स.". के रूप में संदर्भित] अंत.आ. सं. 19633/2013 होने की अनुमति दी गई थी, और अपीलकर्ता द्वारा आदेश VI नियम 17 सि.प्र.सं. के तहत दायर आवेदन अंत.आ. स. 19/2014 होने के कारण खारिज कर दिया गया था।

<u>संक्षिप्त तथ्यः</u>

2. संक्षेप में, तथ्य यह है कि वाद ***सिविल वाद (मूल पक्ष) स. 1772/2005 शीर्षक मीरा कुलकर्णी बनाम अनुराधा प्रसाद व अन्य।*** [इसके बाद "प्रथम वाद" के रूप में संदर्भित] इस न्यायालय के समक्ष दायर किया गया था जिसमें प्रतिवादियों (इसमें अपीलकर्ता सहित) को एन-126, पंचशील पार्क, नई दिल्ली-110017 (इसके बाद "वाद संपत्ति" के रूप में संदर्भित) संपत्ति के किसी भी हिस्से पर कब्जा करने, उससे निपटने, विल्लंगमकारी, अलग करने या बेचने से रोकने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री की मांग की गई थी। पहले वाद में प्रार्थना इस प्रकार हैः

> *“क) वादी के पक्ष में और प्रतिवादियों के विरुद्ध स्थायी निषेधाज्ञा का डिक्री, जिसके द्वारा प्रतिवादियों, उनके अभिकर्ताओं तथा उनके पक्ष में कार्य करने वाले किसी भी अन्य व्यक्ति को इस बात से रोका जाए कि वे उक्त वाद संपत्ति स. एन-126, पंचशील पार्क, नई दिल्ली-110017 के किसी भी भाग का कब्ज़ा छोड़ने, उससे लेन-देन करने, और/या उसे निपटाने, और/या उसे भारग्रस्त करने, और/या उसे परित्यक्त करने,*

हस्तांतरित करने और/या बेचने का कोई भी कार्य किसी भी प्रकार से न करें।

3. पहले वाद में दिनांकित 26.12.2005 के आदेश द्वारा, मामले में नोटिस जारी करते समय, अवकाश न्यायाधीश ने निर्देश दिया कि प्रत्यर्थी के कब्जे में कोई बाधा नहीं आएगी और अपीलकर्ता वाद की संपत्ति के कब्जे से अलग नहीं होगा।

4. इसके बाद, दिनांकित 21.04.2006 के आदेश द्वारा, न्यायालय ने पहले वाद का वाद करते हुए निर्देश दिया कि दोनों पक्ष एक-दूसरे के कब्जे में बाधा नहीं डालेंगे और एक-दूसरे की सहमति के बिना किसी तीसरे पक्ष को तब तक नहीं बेचेंगे, अलग नहीं करेंगे या स्थानांतरित नहीं करेंगे, जब तक कि वाद की संपत्ति को सीमा और सीमा द्वारा विभाजित नहीं किया जाता है।

5. दिनांक 23.03.2007 को, पक्षों ने एक समझौता किया और एक पारिवारिक समझौते के ज्ञापन को निष्पादित किया [जिसे इसके बाद "पारिवारिक समझौता" के रूप में संदर्भित किया गया है]। इसके अनुसरण में, एक संयुक्त आवेदन अंत.अ. सं. 13058/2007 धारा 151 सि.प्र.सं. के तहत पक्षों द्वारा दायर किया गया था जिसमें पहले वाद में पारित दिनांक 26.12.2005 के आदेश में संशोधन की मांग की गई थी।

6. संयुक्त आवेदन का निपटान पहले वाद में 16.11.2007 दिनांकित आदेश द्वारा किया गया था, जिसमें निर्देश दिया गया था कि पारिवारिक वाद को अभिलेख पर लिया जाए और पक्ष परिवार के वाद की शर्तों का पालन करेंगे।

7. दिनांक 12.03.2013 को अपीलकर्ता ने *सिविल वाद (मूल पक्ष) स. 548/2013* शीर्षक ***सुश्री अनुराधा प्रसाद बनाम सुश्री मीरा कुलकर्णी*** [जिसे आगे 'दूसरा वाद' कहा जाएगा] दायर किया, जो 6 वर्षों के अंतराल के बाद दायर किया गया था, जिसमें वाद संपत्ति में अपने अधिकारों की घोषणा की मांग की गई थी। दूसरा वाद प्रारंभ में इस न्यायालय के समक्ष दायर किया गया था और तत्पश्चात, वित्तीय अधिकार क्षेत्र में परिवर्तन के कारण, इसे जिला न्यायालय, साकेत, नई दिल्ली द्वारा सुना और निर्णीत किया गया।

8. संक्षेप में, यह अपीलकर्ता का मामला था कि हालांकि अपीलकर्ता ने पारिवारिक समझौते को निष्पादित किया, लेकिन समझौता दुर्व्यपदेशन, धोखाधड़ी और उस पर अनुचित प्रभाव डालने से प्राप्त किया गया था। इस प्रकार, अपीलकर्ता ने पारिवारिक समझौते और निष्पादित अन्य दस्तावेजों पर विवाद किया।

8.1 इस स्तर पर दूसरे वाद में प्रार्थनाओं को उद्धृत करना उचित है जो निम्नवत हैं:

> *"क) स्थायी निषेधाज्ञा का डिक्री पारित किया जाए, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी को इस बात से रोका जाए कि वह वादी की सहमति के*

बिना वाद की संपत्ति, जिसका नंबर एन-126, पंचशील पार्क, नई दिल्ली है, को बेचे, बोझ डाले या किसी तीसरे पक्ष का हित उत्पन्न करे, जब तक कि संपत्ति का सीमांकन और विभाजन न हो जाए ;

(ख) घोषणा का डिक्री पारित किया जाए, जिसके द्वारा यह घोषित किया जाए कि जी. पी. ए., दस्तावेज़ संख्या 648, अतिरिक्त पुस्तक संख्या IV, वॉल्यूम संख्या 2979, पृष्ठ 109 से 112, दिनांक 22.2.2007, जो उप-निबंधक, नई दिल्ली में पंजीकृत है, जी.पी.ए., एस.पी.ए., एम.ओ.यू. दिनांक 22.3.2007, उच्च न्यायालय में संयुक्त आवेदन अंत.आ. सं. 13058/2007, सिविल वाद (मूल पक्ष) स. 1772/2005, समझौता ज्ञापन, रिलीज़ डीड, वसीयत, जी.पी.ए., एस.पी.ए., अगस्त 2008 के, शून्य और अमान्य, निरस्त, अप्रवर्तनीय और अप्रभावी हैं

(ग) प्रार्थना (ख) के विकल्प में, घोषणा का एक डिक्री पारित किया जाए, जिसके द्वारा जी. पी. ए., दस्तावेज़ संख्या 648, अतिरिक्त पुस्तक संख्या IV, वॉल्यूम संख्या 2979, पृष्ठ संख्या 109 से 112 दिनांक 22.2.2007, उप-निबंधक, नई दिल्ली में पंजीकृत, जी.पी.ए., एस.पी.ए., एम.ओ.यू. दिनांक 22.3.2007, उच्च न्यायालय में संयुक्त आवेदन अंत.आ. सं. 13058/2007 में सिविल वाद (मूल पक्ष) सं. 1772/2005, समझौता ज्ञापन, रिलीज़ डीड, वसीयत, जी. पी. ए., एस. पी. ए., अगस्त 2008 के, विधिक रूप से निरस्त/समाप्त घोषित किए जाएँ और प्रत्यर्थी का वादी की हिस्सेदारी में किसी प्रकार का अधिकार न हो।

(घ) घोषणा का एक डिक्री पारित किया जाए, जिसके द्वारा यह घोषित किया जाए कि दिनांक 16.11.2007 को इस माननीय न्यायालय द्वारा आई.ए. संख्या 13058/2007 में सिविल वाद (मूल पक्ष) सं. 1772/2005 में पारित आदेश का कोई प्रभाव नहीं है और वह प्रत्यर्थी को वादी की हिस्सेदारी में किसी प्रकार का अधिकार, स्वामित्व या हित प्रदान नहीं करता है।; .."

9. प्रत्यर्थी ने आदेश VII नियम 11 सि.प्र.स. के तहत एक आवेदन दायर किया, जिसे दूसरे वाद में अंत.आ. सं. 19633/2013 के वाद में सूचीबद्ध किया गया था। प्रत्यर्थी द्वारा शिकायत की अस्वीकृति के लिए अपने आवेदन में लिए गए आधार थेः

(i) वाद हेतुक को प्रकट न करना क्योंकि यह तर्क दिया गया था कि समग्र रूप से शिकायत वाद हेतुक वास्तविक कारण का खुलासा नहीं करती है। यह भी तर्क दिया गया कि दस्तावेजों का निष्पादन आक्षेपित नहीं है, लेकिन उनके निष्पादन के 6/7 वर्षों के बाद अनुचित प्रभाव और कपटपूर्ण प्रतिनिधित्व के आधार पर आपत्ति जताई गई है।

(ii) वाद आदेश VI नियम 4 सि.प्र.स. के तहत विधि द्वारा वर्जित है क्योंकि अभियोक्ता को धोखाधड़ी, कपटपूर्ण प्रतिनिधित्व या अनुचित प्रभाव के आरोपों के संबंध में विस्तृत विवरण निर्धारित करने की आवश्यकता होती है और वे निर्धारित नहीं किए गए थे।

(iii) वाद आदेश XXIII नियम 3/3A सि.प्र.स. के तहत वर्जित है क्योंकि दिनांकित 16.11.2007 आदेश एक सहमति आदेश है और केवल उस विशेष न्यायालय द्वारा अलग/संशोधित किया जा सकता है जिसने आदेश पारित किया था।

10. अपीलकर्ता ने द्वितीय वाद में आदेश VI नियम 17 सि.प्र.स. के अंतर्गत अंत.आ. सं. 19/2013 दायर की, जिसमें निवेदन किया गया कि याचिका में संशोधन कर प्रत्यर्थी द्वारा अपीलकर्ता की 25% अविभाजित हिस्सेदारी, जो संयुक्त रूप से स्वामित्व वाली उत्तराखंड संपत्ति में है, को 1991 व 1992 में बिक्री विलेखों के माध्यम से उसकी सहमति के बिना कथित धोखाधड़ीपूर्ण बिक्री के विवरण शामिल किए जाएँ। अपीलकर्ता ने यह तर्क दिया कि नई दिल्ली (वाद संपत्ति) और उत्तराखंड संपत्ति दोनों विवाद एक ही धोखाधड़ीपूर्ण योजना से उत्पन्न हुए हैं, जिसमें प्रत्यर्थी द्वारा दबाव और हेरफेर शामिल है

11. जैसा कि ऊपर कहा गया है, आक्षेपित निर्णय द्वारा, विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने आदेश VII नियम 11 सि.प्र.सं. के तहत वाद को यह मानते हुए खारिज कर दिया कि दूसरा वाद विधि द्वारा वर्जित था और पक्षों के बीच निष्पादित दस्तावेजों को एक समझौते के अनुसार निष्पादित किया गया था जिसे पहले वाद में 16.11.2007 दिनांकित आदेश द्वारा स्वीकार किया गया था और चुनौती को आदेश XXIII नियम 3 क सि.प्र.सं. के संदर्भ में एक अलग वाद के माध्यम से बनाए नहीं रखा जा सकता है। विद्वान अधीनस्थ न्यायालय द्वारा आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि प्रार्थना (ख), (ग) व (घ) इस प्रावधान के तहत वर्जित थीं। चूँकि प्रार्थना (ख), (ग) व (घ) को वर्जित माना गया था, इसलिए अपीलकर्ता को प्रार्थना (क) में राहत लेने का कोई अधिकार नहीं होगा।

12. जहाँ तक संबंध है, अपीलकर्ता द्वारा आदेश VI नियम 17 सि.प्र.सं. के तहत दायर संशोधन के लिए आवेदन, आक्षेपित निर्णय द्वारा विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने निर्देश दिया कि उक्त संशोधन के माध्यम से, अपीलकर्ता ने उत्तराखंड में स्थित पक्षों की संयुक्त संपत्ति के संबंध में वर्तमान वाद में विभाजन की राहत जोड़ने की मांग की और ऐसी राहत उस वाद की प्रकृति को बदल देगी जिसे शुरू में घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा के लिए वाद के वाद में दायर किया गया था जिसे विभाजन के वाद में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है।

12.1 यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि विभाजन की राहत उत्तराखंड की संपत्ति है और सि.प्र.सं. की धारा 16 के संदर्भ में उक्त क्षेत्र पर इस न्यायालय का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। इस प्रकार, आक्षेपित निर्णय ने अपीलकर्ता द्वारा दायर आदेश VI नियम 17 सि.प्र.सं. के तहत आवेदन को खारिज कर दिया।

13. अपीलकर्ता द्वारा इस न्यायालय के समक्ष उठाई गई एकमात्र चुनौती वाद की खारिज और आदेश VII नियम 11 सि.प्र.स. के अंतर्गत आवेदन को स्वीकार किए जाने से संबंधित है। आदेश के उस हिस्से के संबंध में, जिसमें आदेश VI नियम 17 सि.प्र.स. के अंतर्गत आवेदन को खारिज किया गया था, किसी भी पक्ष द्वारा कोई प्रस्तुति नहीं दी गई।

<u>अपीलकर्ता के प्रतिविरोध</u>

14. प्रारंभ में, अपीलकर्ता के अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि पारिवारिक समझौता, जो प्रथम वाद के खारिज होने का आधार बना, धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया था। यह कहा गया है कि अपीलकर्ता को यह ज्ञात नहीं था कि वह किस पर हस्ताक्षर कर रही है, क्योंकि वह अवसाद की स्थिति में थी और उसे पारिवारिक समझौते पर हस्ताक्षर करने के लिए बाध्य किया गया था।

14.1 "अपीलकर्ता के अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि अधीनस्थ न्यायालय ने अनुचित रूप से यह मान लिया कि प्रथम वाद में दिनांक 16.11.2007 को पारित आदेश एक समझौता डिक्री था, और यह कि अपीलकर्ता ने द्वितीय वाद में उस समझौता डिक्री को निरस्त करने का प्रयास किया था। यह तर्क दिया गया कि प्रथम वाद में दिनांक 21.04.2006 के आदेश में 'इस प्रकार सहमति हुई' शब्दों का प्रयोग किया गया है, जबकि पक्षकारों द्वारा विधिवत लिखित और हस्ताक्षरित समझौता या संधि दर्ज नहीं की गई थी। अतः, यह आदेश समझौता डिक्री के रूप में नहीं माना जा सकता। इस संदर्भ में ***बनवारी लाल बनाम चंदो देवी (श्रीमती) (विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से) व अन्य*** *पर विश्वास किया है*

14.2 अपीलकर्ता के अधिवक्ता, ***अमरो देवी और अन्य बनाम जुल्फी राम (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से*** *व अन्य*[3] के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए, प्रस्तुत करते हैं कि आदेश XXIII नियम 3 सि.प्र.स. स्पष्ट शब्दों में यह निर्धारित करता है कि किसी समझौते को वैध मानने के लिए

आवश्यक है कि वह एक विधिसम्मत लिखित समझौता या संधि हो, जिस पर पक्षकारों के हस्ताक्षर हों, और जिसे न्यायालय की संतुष्टि हेतु सिद्ध किया जाए। अपीलकर्ता के अधिवक्ता का कहना है कि आदेश XXIII नियम 3 सि.प्र.स. में परिकल्पित समायोजन सामान्यतः उस स्थिति से संबंधित होता है जब वाद का अंतिम निपटारा नहीं हुआ हो और मुख्यतः वाद के लंबित रहने के दौरान समझौते से संबंधित होता है। अतः, प्रथम वाद के निपटारे के बाद दिनांक 16.11.2007 को पारित आदेश को समझौता डिक्री नहीं माना जा सकता।

14.3 इसके अतिरिक्त, अपीलकर्ता का तर्क है कि प्रथम वाद में दायर संयुक्त आवेदन का उद्देश्य दिनांक 26.12.2005 के पूर्ववर्ती अंतरिम आदेश में संशोधन करना था, जिसे अंतिम आदेश दिनांक 21.04.2006 द्वारा पहले ही निष्प्रभावी कर दिया गया था। अतः, एक बार जब प्रथम वाद का निपटान हो गया, तो पूर्व में पारित सभी अंतरिम आदेश स्वतः ही निरस्त हो जाते। इस तर्क को प्रबल करने के लिए ***कँवर सिंह सैनी बनाम दिल्ली उच्च न्यायालय*** के निर्णय पर भरोसा किया गया

14.4 अंततः यह प्रस्तुत किया गया कि न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियाँ, जो धारा 151 सीपीसी के अंतर्गत निहित हैं, न्याय के उद्देश्य की पूर्ति और न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए प्रयोग की जानी चाहिए। अपीलकर्ता का तर्क है कि इन शक्तियों का उपयोग पहले से पारित निर्णय या

डिक्री को पुनः खोलने या परिवर्तित करने के लिए नहीं किया जा सकता, सिवाय दुर्लभ और असाधारण परिस्थितियों में। न तो दिनांक 16.11.2007 का आदेश और न ही दिनांक 21.04.2006 का आदेश समझौता डिक्री की श्रेणी में आता है, अतः आदेश XXIII नियम 3क सीपीसी का सिद्धांत लागू नहीं होगा।

<u>प्रत्यर्थी के प्रतिविरोध</u>

15. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि दिनांक 23.03.2007 पर, पक्षों ने एक पारिवारिक समझौता किया, जिसे न्यायालय के समक्ष दायर किया गया था और उसके बाद 16.11.2007 पर एक आदेश पारित किया गया था। प्रत्यर्थी का तर्क है कि जबकि अपीलकर्ता इन दस्तावेजों को निष्पादित करने या पारिवारिक समझौते के माध्यम से समझौते को अभिलेख पर लेने के लिए संयुक्त आवेदन दायर करने से इनकार नहीं करता है, अपीलकर्ता अब, 6 वर्षों के बाद पहली बार, दावा करती है कि ये दुर्व्यपदेशन, धोखाधड़ी और अनुचित प्रभाव से प्राप्त किए गए थे।

15.1 प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि पारिवारिक समझौते / पारिवारिक समझौते के ज्ञापन के अनुसार, अपीलकर्ता को प्रत्यर्थी द्वारा उसके लिए उसी कॉलोनी में 8 करोड़ रुपये नकद के साथ-साथ एक अलग संपत्ति खरीदी गई थी, जहाँ अपीलकर्ता आज भी रह रही है। इस प्रकार, यह तर्क दिया जाता है कि पारिवारिक समझौते पर दोनों पक्षों द्वारा कार्रवाई की गई थी, जिसके बावजूद, अपीलकर्ता इसे अलग रखने की मांग कर रहा है।

15.2 प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ***अनीता इंटरनेशनल बनाम तुंगबद्रा शुगर वर्क्स मजदूर संघ व अन्य***[5] के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए प्रस्तुत करते हैं कि यह विधि का स्थापित सिद्धांत है कि न तो वाद के पक्षकार और न ही कोई तृतीय पक्ष न्यायालय के आदेश की वैधता या शून्यता को एकतरफा रूप से निर्धारित करने का अधिकार रखते हैं। प्रत्यर्थी का कहना है कि यदि अपीलकर्ता दिनांक 16.11.2007 के आदेश द्वारा पारित सहमति डिक्री से असंतुष्ट थी, तो उसे सक्षम अधिकारिता प्राप्त न्यायालय, अर्थात वही न्यायालय जिसने सहमति डिक्री पारित की थी, के समक्ष आदेश XXIII नियम 3 सीपीसी के प्रावधानों के अंतर्गत उस आदेश को निरस्त करने हेतु आवेदन करना चाहिए था।

15.3 "इस संदर्भ में प्रत्यर्थी के अधिवक्ता ***विधिक प्रतिनिधि श्रीमती साधना राय के माध्यम से श्रीमती पुष्पा देवी भगत (मृत) बनाम राजिंदर सिंह व अन्य***[6] के निर्णय का उल्लेख करते हैं, जिसे अपीलकर्ता ने प्रस्तुत किया है, यह तर्क प्रस्तुत करने हेतु कि दिनांक 16.11.2007 का आदेश, जो स्पष्ट रूप से एक सहमति आदेश था, केवल उसी न्यायालय द्वारा निरस्त/संशोधित किया जा सकता था जिसने उक्त आदेश पारित किया था। क्योंकि आदेश XXIII नियम 3क सीपीसी में निहित निषेध के अनुसार किसी स्वतंत्र वाद को इस आधार पर दायर नहीं किया जा सकता कि समझौता विधिसम्मत नहीं था।

15.4 प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने आदेश VII नियम 11 सि.प्र.सं. के तहत शिकायत को उचित प्रकार से खारिज किया है। दूसरे वाद में दायर शिकायत में वाद हेतुक कोई कारण नहीं था, और यहां तक कि आदेश VI नियम 4 सि.प्र.सं. के संदर्भ में विधि द्वारा वर्जित है, क्योंकि एक पक्ष इस तरह के दावों को साबित करने के लिए विशेष विवरण प्रस्तुत किए बिना धोखाधड़ी, दुर्व्यपदेशन या अनुचित प्रभाव के बचाव का वाद नहीं कर सकता है। ***गायत्री देवी और अन्य बनाम शशि पाल सिंह[7], अफसार शेख व अन्य बनाम सुलेमान बीबी व अन्य[8]*** एवं ***बिशुनदेव नारायण व अन्य बनाम सेओगनी राय व अन्य,*** *पर विश्वास किया है* जो इस विवाद के समर्थन में हैं।

16. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी कहा है कि अपीलकर्ता द्वारा उद्धृत मामले ***अमरो देवी*** मामला, ***बनवारी लाल*** मामला और ***गुरप्रीत सिंह बनाम चतुर भुज गोयल[10]*** ऐसे सभी मामले हैं जहाँ मौखिक पक्षों के बीच समझौते किए गए थे और वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होते हैं जहां एक लिखित समझौता विलेख विद्यमान था जिसे एक संयुक्त आवेदन के माध्यम से न्यायालय में दायर किया गया था और दोनों पक्षों द्वारा हस्ताक्षरित किया गया था।

<u>आक्षेपित निर्णय</u>

17. आक्षेपित निर्णय ने पक्षों द्वारा दायर दो आवेदनों पर एक साथ निर्णय लिया। आदेश VII नियम 11 सि.प्र.सं. के तहत पहला आवेदन प्रत्यर्थी द्वारा दायर किया गया था जबकि आदेश VI नियम 17 सि.प्र.सं. के तहत दूसरा आवेदन अपीलकर्ता द्वारा दायर किया गया था। जैसा कि ऊपर कहा गया है, आक्षेपित निर्णय में पाया गया कि वाद आदेश XXIII नियम 3 क सि.प्र.सं. के प्रावधानों द्वारा वर्जित था और एक बार वाद में समझौता हो जाने के बाद, इस तरह के समझौते को चुनौती देने वाला कोई वाद दायर नहीं किया जाएगा। विद्वान अधीनस्थ न्यायालय ने आदेश XXIII नियम 3 व नियम 3 क सि.प्र.सं. को पढ़ने पर पाया कि जहां कोई समझौता वैध है, उसके खिलाफ कोई अलग वाद नहीं होगा।

17.1 अपीलकर्ता द्वारा आदेश VI नियम 17 के तहत दायर आवेदन को भी सि.प्र.सं. की धारा 16 को देखते हुए आक्षेपित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया था, क्योंकि संयुक्त संपत्ति जिसे विभाजित करने की मांग की गई है, वह उत्तराखंड में स्थित है और इस प्रकार इस तरह के वाद के वाद सक्षम न्यायालय मात्र उत्तराखंड के न्यायालय होंगे। आक्षेपित निर्णय में कहा गया कि उक्त आवेदन द्वारा शुरू में घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा के वाद दायर किए गए वाद को विभाजन के वाद में परिवर्तित कर दिया जाएगा, जिससे वाद की प्रकृति बदल जाएगी जो आदेश VI नियम 17 सि.प्र.सं. के प्रावधानों के तहत अनुमेय नहीं है।

18. जैसा कि ऊपर कहा गया है, अपीलकर्ता ने वाद में संशोधन की मांग करने वाले अपने आवेदन की अस्वीकृति के पहलू पर चुनौती के संबंध में कोई प्रस्तुति नहीं दी। चुनौती अपीलकर्ता द्वारा विद्वान अधीनस्थ न्यायालय द्वारा वाद की अस्वीकृति तक सीमित थी।

19. दिनांक 15.10.2024 पर, इस न्यायालय द्वारा पहले वाद में कार्यवाही की फाइल भी मांगी गई थी। अभिलेख से पता चलता है कि एक संयुक्त आवेदन अंत.आ. सं. 13058/2007 अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी द्वारा दिनांक 30.05.2007 पर दायर किया गया था जिसमें दिनांक 26.12.2005 [इसके बाद "संयुक्त आवेदन" के रूप में संदर्भित] आदेश में संशोधन की मांग की गई थी। आवेदन में इस फाइलिंग का कारण भी स्पष्ट किया गया है। उसमें कहा गया है कि चूँकि न्यायालय ने दिनांक 26.12.2005 को एक आदेश पारित किया था जिसमें पक्षकारों को यह निर्देश दिया गया था कि वे एक-दूसरे की सहमति के बिना वाद संपत्ति का निपटान न करें और अब जब पक्षकारों ने आपसी सहमति से मामला सुलझा लिया है, तो यह आवेदन आवश्यक था। संयुक्त आवेदन में आगे कहा गया है कि पारिवारिक समझौते की शर्तों के अनुसार, अपीलकर्ता ने वाद संपत्ति के संबंध में अपने सभी अधिकार प्रत्यर्थी के पक्ष में हस्तांतरित और प्रदान कर दिए हैं तथा अपीलकर्ता के लिए प्रत्यर्थी ने पंचशील पार्क, नई दिल्ली में ई-15 नंबर पर प्रथम तल का एक फ्लैट खरीदा है। इसके अतिरिक्त, यह भी कहा गया है कि अपीलकर्ता को अन्य सुविधाएं और आर्थिक सहायता प्रदान की

गई है जैसा कि दोनों बहनों [अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी] के बीच सहमति हुई थी। संयुक्त आवेदन के अनुच्छेद 3 व 4 निम्नानुसार उद्धृत किए गए हैं।:

> *"3. यह कि इस वाद का वाद माननीय न्यायमूर्ति श्री संजीव खन्ना द्वारा पारित दिनांक 26.12.2005 के आदेश द्वारा किया गया था,* ***<u>जिससे पक्षों को एक-दूसरे की सहमति के बिना और माप और सीमा द्वारा विभाजन के बिना संपत्ति का निपटान नहीं करने का निर्देश दिया गया था</u>****।*
>
> *4. अब पक्षकारों ने आपसी सहमति से मामला सुलझा लिया है और* ***<u>एक पारिवारिक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर और निष्पादित किया गया है</u>****, जिसकी प्रति परिशिष्ट-1 के रूप में संलग्न है। पारिवारिक समझौता ज्ञापन के अनुसार, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने* ***<u>संपत्ति संख्या एन -126, पंचशील पार्क, नई दिल्ली के संबंध में अपने सभी अधिकार वादी के पक्ष में हस्तांतरित कर दिए हैं और वादी श्रीमती मीरा कुलकर्णी ने उनके लिए पंचशील पार्क, नई दिल्ली में ई-15 नंबर पर प्रथम तल का एक फ्लैट खरीदा है। इसके अतिरिक्त, उन्हें विभिन्न अन्य सुविधाएं और आर्थिक सहायता भी प्रदान की गई है, जैसा कि दोनों बहनों के बीच सहमति हुई थी।</u>***
>
> [जोर दिया गया]

19.1 संयुक्त आवेदन पैराग्राफ 5 में दोनों पक्षों की ओर से एक वचन भी दर्ज करता है कि वे पारिवारिक समझौते की शर्तों का सम्मान करेंगे। अपीलकर्ता ने यह भी पुष्टि की और वचन दिया कि उसने प्रत्यर्थी के पक्ष में वाद संपत्ति में अपने हिस्से को त्याग दिया है और प्रत्यर्थी वाद संपत्ति का एकमात्र मालिक होगा। संयुक्त आवेदन में आगे कहा गया है कि दिनांक 26.12.2005 पर न्यायालय द्वारा पारित निर्देशों को ध्यान में रखते हुए, पारिवारिक समझौते को अभिलेख में लिया जाना चाहिए और इसके संबंध में एक उचित आदेश पारित किया जाना चाहिए।

19.2 पैराग्राफ 5 और संयुक्त आवेदन का प्रार्थना खंड निम्नानुसार उद्धृत किया गया हैः

> *"5. "पक्षकार इस माननीय न्यायालय को यह आश्वासन देते हैं कि वे पारिवारिक समझौता ज्ञापन की शर्तों का निष्ठापूर्वक पालन करेंगे और उनका सम्मान करेंगे। प्रत्यर्थी संख्या 1 यह पुष्टि करती हैं और सहमत हैं कि उन्होंने उक्त संपत्ति में अपने हिस्से, अधिकार और हित को विशेष रूप से वादी के पक्ष में त्याग दिया है।* ***प्रतिवादी सं. 1 आगे इस माननीय न्यायालय को यह भी पुष्टि करती हैं और आश्वासन देती हैं कि उन्होंने पहले ही अपना हिस्सा वादी के पक्ष में त्याग दिया है और उन्होंने सभी आवश्यक दस्तावेजों पर हस्ताक्षर और क्रियान्वयन कर दिया है, जैसा कि वादी या किसी अन्य पक्ष द्वारा आवश्यक हो सकता है।*** *वादी संपत्ति संख्या एन-126, पंचशील पार्क, नई दिल्ली की संपूर्ण और वैध स्वामिनी बनी रहेंगी और एकमात्र स्वामिनी होने के नाते उन्हें उससे संबंधित सभी अधिकार और शीर्षक प्राप्त होंगे तथा वे उसे अपनी इच्छा अनुसार किसी भी प्रकार से उपयोग कर सकती हैं।*
>
> *इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पक्षकारों ने अपने विवादों को आपसी सहमति से सुलझा लिया है और पारिवारिक समझौता ज्ञापन पहले ही क्रियान्वित हो चुका है तथा* ***प्रतिवादी ने अपने अधिकार वादी के पक्ष में त्याग दिए हैं, विनम्र निवेदन है कि उपर्युक्त वाद में दिनांक 26.12.05 को पारित आदेश को तदनुसार संशोधित किया जाए और इस आवेदन के साथ संलग्न परिशिष्ट क-1 के रूप में पारिवारिक समझौता ज्ञापन को अभिलेख में लिया जाए।****"*
>
> [जोर दिया गया]

19.3 संयुक्त आवेदन का समर्थन दो शपथपत्रों द्वारा किया गया था, जिनमें से प्रत्येक अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी का था और दोनों पक्षों और उनके अधिवक्ता

द्वारा विधिवत निष्पादित किया गया था। पहले वाद में पारित दिनांकित 16.11.2007 आदेश, दोनों पक्षों की ओर से अधिवक्ता की उपस्थिति को भी दर्ज वाद है।

20. आदेश XXIII नियम 3 क सि.प्र.सं. एक वाद के वाद इस आधार पर एक डिक्री को अपास्त करने के वाद एक पूर्ण प्रतिबंध है कि एक समझौता जिस पर डिक्री आधारित है वह वैध नहीं था। जबकि आदेश XXIII नियम 3 सि.प्र.सं. अभिलेख करता है कि जहां एक वाद को लिखित में समझौते द्वारा पूरी तरह से या आंशिक वाद से समायोजित किया गया है या जहां एक प्रत्यर्थी पूरे या दावे के एक हिस्से के संबंध में वादी को संतुष्ट करता है, तो न्यायालय ऐसे समझौते, समझौते को दर्ज करने का आदेश देगी और उसके संदर्भ में एक डिक्री पारित करेगी। सि.प्र.सं. की धारा 2(2) के तहत एक डिक्री को परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ है एक निर्णय की औपचारिक अभिव्यक्ति जो निर्णायक रूप से पक्षों के अधिकारों का निर्णय या निर्धारण करती है। धारा 2(2) सि.प्र.सं., आदेश XXIII नियम 3 और आदेश XXIII नियम 3 क नीचे दिए गए हैंः

> *"2. **परिभाषाएँ**–इस अधिनियम में, जब तक विषय या प्रसंग में कोई विरोधाभास न हो,–*
>
> *(2) "डिक्री" का अर्थ है किसी निर्णय का औपचारिक अभिव्यक्ति, जो न्यायालय द्वारा व्यक्त किए जाने तक, वाद में आक्षेपित सभी या किसी भी विषय के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों का अंतिम रूप से निर्धारण करती है और यह प्रारंभिक या अंतिम हो*

सकती है। इसमें वादपत्र की अस्वीकृति और किसी प्रश्न का निर्धारण [शब्द और अंक "धारा 47 या" को धारा 3 द्वारा, उक्त (प्रभावी तिथि 1-2-1977) से हटा दिया गया] धारा 144 के अंतर्गत माना जाएगा, परंतु इसमें निम्नलिखित शामिल नहीं होंगे– "।

XX XX XX XX XX

"आदेश XXIII- वादों की वापसी एवं समायोजन"

3. वाद का समझौता– *जब यह न्यायालय की संतुष्टि के लिए सिद्ध हो जाता है कि कोई वाद पूर्णतः या आंशिक रूप से किसी वैध समझौते या समझौते [जो लिखित रूप में हो और पक्षकारों द्वारा हस्ताक्षरित हो] द्वारा निपटाया गया है, या जब प्रत्यर्थी ने वादी को वाद के विषय-वस्तु के संपूर्ण या किसी भाग के संबंध में संतुष्ट कर दिया है, तो न्यायालय ऐसे समझौते, संधि या संतुष्टि को अभिलेख में दर्ज करने का आदेश देगा और उसके अनुसार एक डिक्री पारित करेगा, जहाँ तक वह वाद के पक्षकारों से संबंधित है, चाहे समझौते, संधि या संतुष्टि का विषय-वस्तु वाद के विषय-वस्तु के समान हो या न हो।"*

XX XX XX XX XX

*3क **वाद पर रोक** – किसी डिक्री को इस आधार पर निरस्त करने के लिए कोई वाद स्वीकार्य नहीं होगा कि जिस समझौते पर वह डिक्री आधारित है, वह वैध नहीं था।"*

21. अब यह अनिर्णीत विषय नहीं रहा कि पक्षकारों के मध्य हुआ समझौता धारा 2(2) सिविल प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत डिक्री माना जाएगा। सर्वोच्च न्यायालय ने ***पुष्पा देवी भगत*** मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि जब न्यायालय इस बात से संतुष्ट हो जाता है कि कोई वाद पूर्णतः या आंशिक रूप से किसी लिखित समझौते या संधि द्वारा निपटाया गया है, तो पक्षकारों के

बीच हुए समझौते के अनुसार डिक्री पारित की जाएगी। और यह भी कहा गया कि सहमति डिक्री को चुनौती देने का एकमात्र उपाय यही है कि उस न्यायालय के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया जाए जिसने समझौते को दर्ज किया था, और वही न्यायालय यह तय करेगा कि समझौता वैध था या नहीं। न्यायालय ने यह भी स्पष्ट किया कि किसी समझौता डिक्री को चुनौती देने के लिए अलग स्वतंत्र वाद दायर नहीं किया जा सकता, बल्कि केवल आदेश 23 नियम 3 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान के अंतर्गत आवेदन प्रस्तुत किया जा सकता है।

21.1 ***पुष्पा देवी भगत*** मामले का प्रासंगिक अंश सहमति डिक्री को चुनौती देने के लिए उपलब्ध उपाय को निम्न प्रकार से स्पष्ट करता है:

> *"17. आदेश 23 के संशोधित प्रावधानों से उत्पन्न स्थिति का सारांश इस प्रकार दिया जा सकता हैः*
>
> *(i) सि.प्र.सं. की धारा 96(3) में निहित विशिष्ट बाधा को ध्यान में रखते हुए सहमति डिक्री के खिलाफ कोई अपील विचारणीय नहीं है।*
>
> *(ii) नियम 1 आदेश 43 के खंड (ड) को हटाने के मद्देनजर समझौता दर्ज करने (या समझौता दर्ज करने से इनकार करने) के न्यायालय के आदेश के खिलाफ कोई अपील कायम नहीं की जा सकती है।*
>
> ***(iii) इस आधार पर समझौता डिक्री को दरकिनार करने के वाद कोई स्वतंत्र वाद दायर नहीं किया जा सकता है कि नियम 3-क में निहित बाधा को देखते हुए समझौता वैध नहीं था।***
>
> ***(iv) एक सहमति डिक्री एक अवरोध के रूप में काम करती है और वैध और बाध्यकारी है जब तक कि इसे उस न्यायालय***

<u>द्वारा दरकिनार नहीं किया जाता है जिसने नियम 3 आदेश 23 के प्रावधान के तहत एक आवेदन पर एक आदेश द्वारा सहमति डिक्री पारित की है।</u>

इसलिए, इस तरह की सहमति डिक्री से बचने के लिए सहमति डिक्री के लिए एक पक्ष के लिए उपलब्ध एकमात्र उपाय उस न्यायालय से संपर्क करना है जिसने समझौता दर्ज किया और इसके संदर्भ में एक डिक्री बनाई, और यह स्थापित किया कि कोई समझौता नहीं था। उस स्थिति में, समझौता दर्ज करने वाले न्यायालय स्वयं इस प्रश्न पर विचार करेगा एवं निर्णय देगा कि क्या कोई वैध समझौता हुआ था या नहीं। ***<u>ऐसा इसलिए है क्योंकि एक सहमति डिक्री कुछ और नहीं बल्कि न्यायालय के अनुमोदन की मुहर के साथ अधिरोपित पक्षों के बीच अनुबंध है।</u>*** *सहमति आदेश की वैधता पूरी तरह से उस समझौते या समझौते की वैधता पर निर्भर करती है जिस पर यह किया जाता है। दूसरा प्रत्यर्थी, जिसने सहमति समझौता डिक्री को चुनौती दी थी, इस स्थिति से पूरी तरह से अवगत था क्योंकि उसने 21-8-2001 पर सहमति डिक्री को अलग करने के लिए एक आवेदन दायर किया था जिसमें आरोप लगाया गया था कि विधि के अनुसार कोई वैध समझौता नहीं था। महत्वपूर्ण रूप से, अन्य प्रतिवादियों में से किसी ने भी सहमति आदेश को चुनौती नहीं दी। स्वयं को सबसे अच्छी तरह से ज्ञात कारणों के लिए, दूसरे प्रत्यर्थी ने कुछ दिनों के भीतर (जो कि 27-8-2001 पर है) एक अपील दायर की और न्यायालय के समक्ष दायर आवेदन को आगे नहीं बढ़ाने का फैसला किया जिसने सहमति डिक्री पारित की। संहिता की धारा 96 (3) में निहित स्पष्ट निषेध को ध्यान में रखते हुए, दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा ऐसी अपील विचारणीय नहीं थी।"*

[जोर दिया गया]

22. ***अमरो देवी*** मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि जहां समझौता लिखित नहीं किया गया है और न ही न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया है, वहां आदेश XXIII नियम 3 सि.प्र.सं. की आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जाता है। अपीलकर्ता ने यह प्रस्तुत करने के लिए इस निर्णय पर भरोसा किया है कि दिनांक 16.11.2007 का आदेश एक आदेश/समझौता डिक्री नहीं है। अपीलकर्ता का यह तर्क आधारहीन है। ***अमरो देवी*** मामले में निर्णय एक ऐसे मामले में आया था जिसमें समझौता लिखित रूप में नहीं था और न ही इसे न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया था। ***अमरो देवी*** मामले में निर्णय का प्रासंगिक उद्धरण निम्नवत हैः

> *"20. उपरोक्त प्रावधान के एक सामान्य पठन में स्पष्ट वाद से प्रावधान किया गया है कि किसी वाद में वैध समझौते के लिए एक वैध समझौता या समझौता लिखित वाद में होना चाहिए और पक्षों द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए, जिसके लिए इसे न्यायालय की संतुष्टि के लिए साबित करने की आवश्यकता होगी।* ***<u>वर्तमान मामले में लिखित रूप में कोई दस्तावेज नहीं है जिसमें समझौते या समझौते की शर्तें हों। लिखित रूप में किसी भी दस्तावेज की अनुपस्थिति में, पार्टियों के हस्ताक्षर करने का प्रश्न ही नहीं उठता है।</u>*** *यहां तक कि न्यायालय की संतुष्टि के लिए ऐसे दस्तावेज को विधिसम्मत साबित करने का सवाल भी नहीं उठा। इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता है कि 20.08.1984 का आदेश आदेश XXIII नियम 3 सि.प्र.सं. के तहत एक आदेश था।*
>
> *XX XX XX XX XX*
>
> ***<u>23. वर्तमान मामले में, न तो समझौता विलेख को लिखित कर दिया गया है, न ही इसे न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया है।</u>***

इस तरह के कथित समझौते के बारे में न्यायालय के समक्ष पक्षों के केवल बयान, सि.प्र.सं. के आदेश XXIII नियम 3 की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकते हैं। इसलिए, समझौता डिक्री मान्य नहीं है।"

[जोर दिया गया]

23. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, वर्तमान मामले में, एक पारिवारिक समझौते को दर्ज करते हुए संयुक्त आवेदन दायर किया गया था। संयुक्त आवेदन पर दोनों पक्षों द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे और दोनों पक्षों के शपथपत्रों द्वारा भी इसका समर्थन किया गया था और इसमें पारिवारिक समझौते को अभिलेख पर लेने की प्रार्थना भी शामिल थी। पक्षों ने पारिवारिक समझौते को संयुक्त आवेदन के संलग्नक क-1 के रूप में संलग्न किया था। अपीलकर्ता का विधिवत प्रतिनिधित्व एक अधिवक्ता द्वारा किया गया था।

24. पहले वाद में पारित दिनांक 16.11.2007 के आदेश के पुनर्विलोकन से पता चलता है कि पारिवारिक वाद को अभिलेख में लिया गया था और न्यायालय ने एक निर्देश पारित किया कि पक्ष पारिवारिक वाद में निहित वाद की शर्तों का पालन करना करेंगे। यह आदेश के अंतिम लेकिन एक पैराग्राफ में परिलक्षित होता है। आदेश संक्षिप्त होने के कारण नीचे दिया गया हैः

"वर्तमानः अभियोक्ता की ओर से श्री अशोक छाबड़ा।

प्रतिवादी की ओर से श्री निखिल सिंगला।

अंत.आ. सं. 13058/2007 (धारा 151 सि.प्र.सं. के तहत) सि. वा. (मूल पक्ष) सं. 1772/2005

<u>यह दिनांक 26.12.2005 पर इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश में संशोधन</u> *की मांग करने वाले पक्षों द्वारा दायर एक संयुक्त आवेदन है।*

मुख्य वाद का निपटान इस न्यायालय द्वारा दिनांक 21.4.2006 को पारित आदेश के माध्यम से किया गया, जिसमें वादी और प्रत्यर्थी संख्या 1 को निर्देश दिया गया कि वे एक-दूसरे के कब्जे में हस्तक्षेप न करें और जब तक संपत्ति का सीमांकन द्वारा विभाजन न हो जाए, तब तक वाद संपत्ति को किसी तीसरे पक्ष को बेचें, हस्तांतरित करें या स्थानांतरित न करें।

वाद के अंतिम निपटान के परिणामस्वरूप, ***यह कहा गया है कि पक्षकारों ने दिनांक 23.3.2007 को एक समझौता ज्ञापन (समझौता ज्ञापन) में प्रवेश किया, जिसके द्वारा उन्होंने वाद संपत्ति से संबंधित अपने विवादों का निपटारा किया। वर्तमान आवेदन के माध्यम से पक्षकार चाहते हैं कि इस समझौता ज्ञापन को अभिलेख में लिया जाए। वर्तमान आवेदन के साथ संलग्न समझौता ज्ञापन को अभिलेख में लिया जाता है। पक्षकार उक्त समझौता ज्ञापन में निहित अपने समझौते की शर्तों का पालन करेंगे।***

आवेदन का निपटान किया गया है .. .."।

[जोर दिया गया]

25. इन परिस्थितियों को देखते हुए, अपीलकर्ता का यह तर्क देना कि यह आदेश एक वैध समझौता आदेश या आदेश XXIII नियम 3 सि.प्र.सं. के तहत एक आदेश नहीं है, गुणागुण रहित है।

26. अपीलकर्ता ने दूसरे वाद में अभिवचन दायर किया की है कि पारिवारिक वाद पर जबरदस्ती और अनुचित प्रभाव से हस्ताक्षर किए गए थे। आदेश VI

नियम 4 सि.प्र.सं. के प्रावधानों में प्रावधान है कि जहां धोखाधड़ी का दुर्व्यपदेशन या अनुचित प्रभाव का अनुरोध किया जाता है, वहां महत्वपूर्ण तथ्यों का अनुरोध किया जाना चाहिए। दूसरे वाद में वाद के अवलोकन से पता चलता है कि अपीलकर्ता द्वारा लिया गया एकमात्र आधार यह था कि अपीलकर्ता भावनात्मक, मानसिक और शारीरिक वाद से परेशान था और प्रत्यर्थी द्वारा हेरफेर किया गया था। अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी के पारिवारिक जीवन के बारे में कई अन्य अप्रासंगिक और अस्पष्ट कथन दिए गए हैं। इसमें यह भी कहा गया है कि अपीलकर्ता को प्रत्यर्थी द्वारा शराबी बनने के लिए प्रेरित किया गया था। शिकायत में यह भी कहा गया है कि अपीलकर्ता को हस्ताक्षर पत्रों में बहकाना गया था। हालांकि, शिकायत स्वीकार करती है कि अपीलकर्ता प्रत्यर्थी द्वारा उसके लिए खरीदे गए पहली मंजिल के फ्लैट में स्थानांतरित हो गई थी। इस प्रकार माना जाता है कि पारिवारिक समझौते पर कार्रवाई की गई थी।

27. अपीलकर्ता द्वारा उठाया गया दूसरा तर्क यह है कि संयुक्त आवेदन में दिनांक 26.12.2005 के अंतरिम आदेश में संशोधन की मांग की गई थी, हालांकि, चूंकि अंतरिम आदेश को दिनांक 21.04.2006 के अंतिम आदेश द्वारा "शून्य" कर दिया गया था, इसलिए पहले पारित किए गए सभी अंतरिम आदेश स्वचालित रूप से बातिल हो जाएंगे।

28. अपीलकर्ता का यह प्रतिविरोध भी अनुचित है। दिनांक 26.12.2005 का आदेश एक अंतरिम आदेश था, जो बाद में न्यायालय द्वारा 21.04.2006 को

पारित अंतिम आदेश में समाहित हो गया। चूँकि पहला वाद प्रत्यर्थी द्वारा अपीलकर्ता के विरुद्ध स्थायी निषेधाज्ञा के लिए दायर किया गया था, इसलिए वाद का निपटान इस समझौते को दर्ज करके किया गया कि दोनों पक्षकार एक-दूसरे के कब्जे में हस्तक्षेप नहीं करेंगे और संपत्ति का विभाजन होने तक, बिना आपसी सहमति के, उसे किसी तीसरे पक्ष को बेचेंगे, हस्तांतरित करेंगे या स्थानांतरित नहीं करेंगे। अतः इस आदेश को संशोधित करना आवश्यक था ताकि समझौते/पारिवारिक निपटान को प्रभावी बनाया जा सके।

29. पारिवारिक समझौते में यह दर्ज है कि अपीलकर्ता के लिए पंचशील पार्क में प्रथम तल का अलग फ्लैट संख्या ई-15 खरीदा गया है। इसमें यह भी दर्ज है कि अपीलकर्ता को प्रत्यर्थी से आर्थिक सहायता प्राप्त हुई है और यह कि जैसे ही पारिवारिक समझौता क्रियान्वित हो जाएगा, पक्षकार संयुक्त रूप से न्यायालय के समक्ष दिनांक 26.12.2005 को प्रथम वाद में पारित आदेश को संशोधित करने हेतु आवेदन करेंगे। न्यायालय द्वारा दिनांक 16.11.2007 को पारित आदेश में यह दर्ज किया गया कि पारिवारिक समझौते को अभिलेख में लिया गया है और पक्षकार उसमें निहित शर्तों का पालन करेंगे।

30. आदेश XXIII नियम 3 सि.प्र.सं. के प्रावधान को लागू करने के लिए आवश्यक है कि एक वैध लिखित समझौता, जिस पर दोनों पक्षकारों के हस्ताक्षर हों, अभिलेख का हिस्सा हो। ऐसा समझौता यहाँ पारिवारिक निपटान के रूप में मौजूद है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि पारिवारिक निपटान अभिलेख

में प्रस्तुत किया गया है और उस पर अमल भी किया गया है। इसके आधार पर अपीलकर्ता के लिए प्रथम तल का एक फ्लैट खरीदा गया है, जिसे अपीलकर्ता ने नकारा नहीं है, और यह भी दर्ज है कि अपीलकर्ता को पर्याप्त धनराशि प्राप्त हुई है। इसके बाद दिनांक 16.11.2007 का आदेश पारित किया गया। धारा 2(2) सि.प्र.सं. के अंतर्गत डिक्री की परिभाषा में ऐसा आदेश भी शामिल है जो पक्षकारों के अधिकारों का अंतिम रूप से निर्धारण करता है, और इस दृष्टि से दिनांक 16.11.2007 का आदेश ऐसा ही आदेश है। इसमें यह भी दर्ज है कि *"पक्षकार उक्त पारिवारिक निपटान में निहित समझौते की शर्तों का पालन करेंगे"*।

31. इन परिस्थितियों में, आदेश XXIII नियम 3क सि.प्र.सं. में निर्धारित रोक लागू होती है। ***पुष्पा देवी भगत*** मामले में जैसा कहा गया है कि अपीलकर्ता का उपाय, यदि कोई हो, तो उसी न्यायालय के समक्ष जाना था जिसने डिक्री पारित की थी। किंतु अपीलकर्ता ने इसके बजाय एक नया वाद दायर किया, जो विधि में अनुमेय नहीं है और जिसे विद्वान् विचारण न्यायालय ने आदेश VII नियम 11(घ) सि. प्र. स के प्रावधानों के अंतर्गत उचित रूप से खारिज कर दिया।

32. उपरोक्त चर्चाओं के आलोक में, हमें आक्षेपित निर्णय में कोई त्रुटि प्रतीत नहीं होती है। अपील, तदनुसार, खारिज की जाती है।

33. पक्षकार इस निर्णय की डिजिटल रूप से हस्ताक्षरित प्रति के आधार पर कार्य करेंगे।"

तारा वितस्ता गंजू, न्या.

07 जनवरी, 2025/जी.जोशी./आर

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*